देश के स्वाधीनता संग्राम

के

अमृतसर काण्ड के

महान नामधारी शहीद

संत हाकम सिंह, संत बीहला सिंह
संत फतह सिंह, संत लहना सिंह

जसविंद्र सिंह इतिहासकार
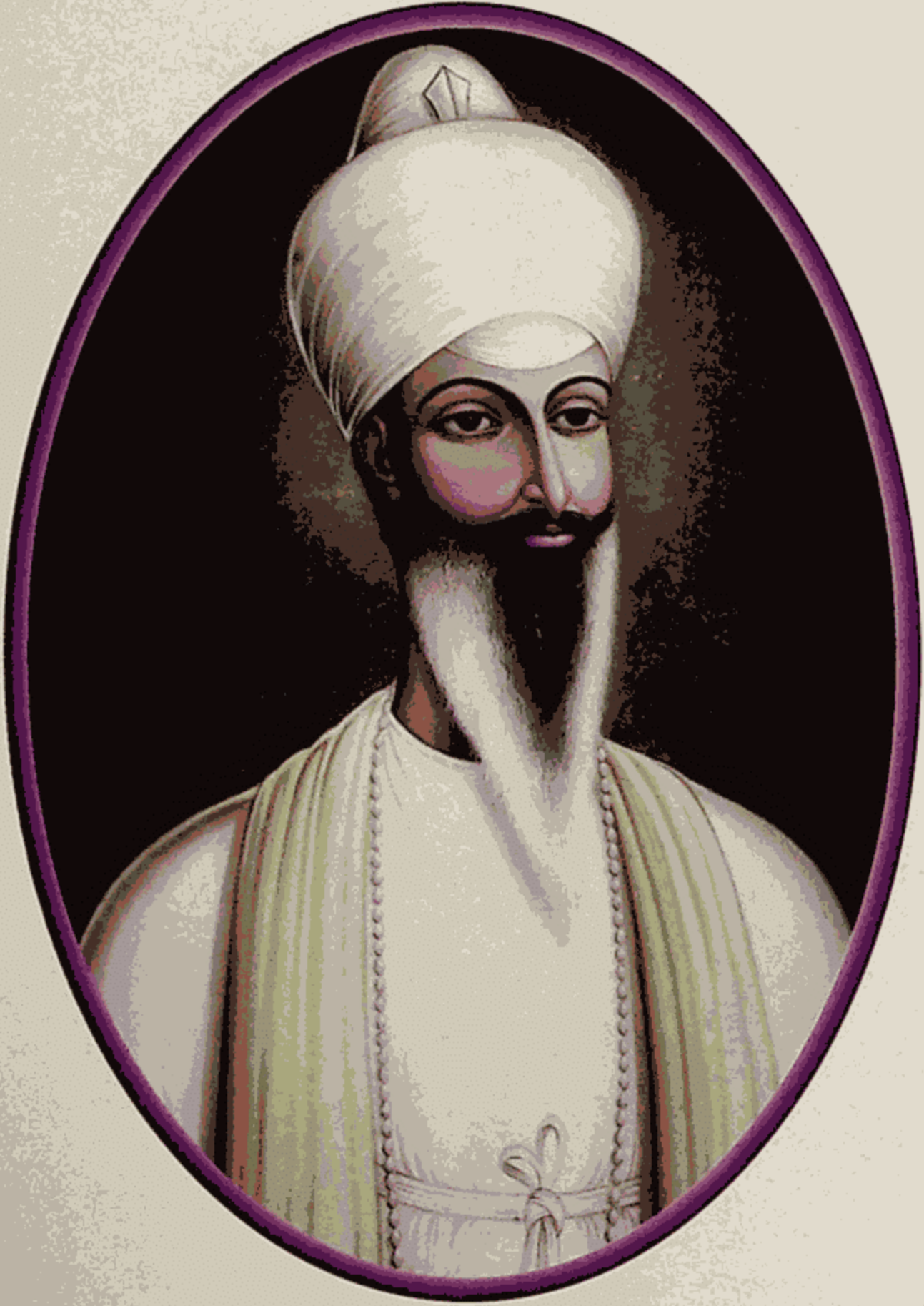
श्री सतगुरू राम सिंह जी महाराज

(गुरू) राम सिंह : सिख दार्शनिक तथा सुधारक पहले भारतीय थे जिन्होंने सहयोग तथा बरतानवी वस्तुओं तथा सेवाओं को राजनीनिक शास्त्र के तौर पर पहली बार प्रयोग किया।

(एनसाइकलोपीडिया ब्रिटेनिका अंक 8, पृष्ठ 142)

"सत्य तो यह है कि किसी कूका के लिए बरतानवी शासन का वफादार नागरिक होना असंभव है

लुधियाना जिला गज़ेटियर-1904

देश की स्वतन्त्रता के लिए शहीद

संत लहना सिंह, संत हाकम सिंह, संत बीहला सिंह और संत फतह सिंह

15 सितम्बर 1871, रामबाग, श्री अमृतसर (पंजाब)

श्री सतगुरू राम सिंह द्वारा 1857 ई० की वैसाखी के दिन शुरू किया गया 'कूका आन्दोलन' कई कारणों से विलक्षण था । जब पंजाब पर अंग्रेजों ने पूरा अधिकार कर लिया तो विदेशी साम्राज्य से छुटकारा पाने के लिए सतगुरू जी ने पंजाब की जनता को जागृत करके संगठित करना शुरू किया । 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध के दौरान केवल और केवल नामधारी ही थे जो संगठित रूप से देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे । सतगुरू जी ने जनता को विदेशी साम्राज्य के विरूद्ध असहयोग का आह्वान किया । स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग और विदेशी वस्तुओं, सुविधाओं, अदालतों, स्कूलों, रेलगाड़ियों तथा नौकरियों आदि के बहिष्कार का आह्वान किया और अपनी डाक व्यवस्था चलाई जिसे इतिहास में 'कूका पोस्टल सर्विस' कहा जाता है।

स्वतन्त्रता संग्राम को और अधिक तीव्रता देने के लिए तथा संगठित प्रयत्न करने के लिए कश्मीर, नेपाल, काबुल और रूस के साथ सम्पर्क सूत्र स्थापित किए । कश्मीर में तो एक कूका पलटन की स्थापना भी की गई । नेपाल में रहने वाले 1857 के क्रन्तिकारियों के साथ सम्पर्क स्थापित किया और पंजाब के लोगों को संघर्ष के लिए

तैयार किया । उस समय पंजाब में गुलामी का अहसास करवाने के लिए अंग्रेज शासन की शह पर व्यापक स्तर पर गऊ वध शुरू हो गया था । पवित्र नगर अमृतसर में भी जहां गुरू जी ने अपने पावन चरणों का स्पर्श किया था, बड़े पैमाने पर गौहत्या हो रही थी । यह सिखों के लिए एक चुनौती थी । सतगुरू राम सिंह जी के प्रचार से लोगों में जागृति आ गई थी और वे गौहत्या से बहुत दुखी थे । जब पंजाब के हिन्दुओं तथा सिखों द्वारा किए गए शान्तिपूर्ण यत्न गौहत्या रोकने में असफल रहे तो नामधारी सिखों ने जोश में आकर अमृतसर, बागांवाली तथा रायकोट में गौहत्या करने वालों के विरूद्ध कार्यवाही की और स्वंय फांसी के तख्ते पर झूल गए । अमृतसर की घटना उनमें से एक थी ।

वर्ष 2007 में कूका आन्दोलन होने के 150 वर्ष पूरे हो गए हैं। देश की स्वाधीनता की प्रथम लड़ाई की याद समुचित ढंग से मनाई जा रही है तथा स्वाधीनता संग्राम में बलिदान देने वालों को स्मरण किया जा रहा है । शहीदों की इस माला के शानदार हीरों में संत लहना सिंह, संत हाकम सिंह, संत बीहला सिंह तथा संत फतह सिंह शामिल हैं जिन्होंने अमृतसर में हंसते हुए फांसी के फंदे को चूमा ।

15 सितम्बर, 1871 ई० को चार नामधारी सिखों लहना सिंह, हाकम सिंह, बीहला सिंह और फतह सिंह को रामबाग, अमृतसर के बाहर वट वृक्ष के साथ खुलेआम फांसी दी गई । इस घटना के वक्त भारी संख्या में नगर निवासी तथा सरकारी अफसर वहां उपस्थित थे । चारों नामधारी सिंह बड़े साहस के साथ शब्दोच्चारण करते हुए फांसी

वाले स्थान पर पहुंचे । उनके चेहरों पर मौत को कोई भय नहीं था । फांसी दिए जाने के समय इन देश भक्तों ने कहा कि कोई जल्लाद उन्हें हाथ न लगाए, वे फांसी का फंदा स्वंय अपने गले में डाल लेंगे, देश तथा गौ रक्षा के लिए बलिदान देने में उन्हें गर्व है । इस प्रकार शब्दोच्चारण करते हुए इन चारों ने रेशम का फंदा, जो उन्होंने कह कर विशेष रूप से तैयार करवाया था, स्वंय अपने गले में डाला और एक के बाद एक फांसी पर झूल गए ।

देश तथा धर्म की रक्षा के लिए और इसकी पवित्रता बनाये रखने के लिए शहीद होने वाले इन चारों नामधारी शहीदों का बलिदान अद्वितीय था । इन्होंने अपने उद्यम से, अपने बलिदान से यह सिद्ध कर दिया कि पंजाब में सिखों का गौरव अभी कायम है, वह विदेशी शासन की बुरी नीतियों का अपनी जान देकर भी विरोध करेंगे । पंजाब में महाराजा रंजीत सिंह के शासनकाल में गौहत्या पर पूर्ण प्रतिबंध था, कोई गौहत्या नहीं कर सकता था, यहां तक कि यूरोपियन अफसर तथा अंग्रेज भी जो खालसा दरबार में कार्यरत थे और वहां रहते थे, वे भी गऊ मांस नहीं खा सकते थे । इसका उल्लंघन करने वालों के लिए मौत की सजा अनिवार्य थी । खालसा राज के शासन में सभी लोग गऊ वध के प्रतिबंध का पूरी तरह पालन करते थे । अफगान युद्ध के समय जब अंग्रेज सैनिकों को पंजाब से गुजरना था, उस समय भी उन्हें सख्त निर्देश था कि अंग्रेज सेना अपने सैनिकों के लिए गऊ वध नहीं करेगी।'

परन्तु पंजाब पर अंग्रेज शासन स्थापित होने के बाद स्थिति बदलनी शुरू हो गई । अंग्रेज स्वंय गौ-मास खाते थे इसलिए भारत में

जहां भी उन्होंने अपनी सत्ता स्थापित की, अपनी सुविधाओं को मुख्य रखते हुए उन्होंने गौहत्या को प्रोत्साहन दिया । अंग्रेज स्वंय गौ-मास खाते थे और ऐसा ही मुसलमान भी करते थे इसलिए गौवध करवाना अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति के अनुकूल था । हिन्दू वर्ग इस पर दूखित था परन्तु मुस्लिम वर्ग खुश होकर अंग्रेजों से सहयोग करता था । इस प्रकार गौवध करवाना अंग्रेजों की कूटिल नीति का एक भाग तो था ही, इसके साथ ही वे इसे शासक होने के प्रमाण के तौर पर भी व्यक्त करते थे । अंग्रेज अपने शासित क्षेत्रों में गौवध को प्रोत्साहन देकर यह सिद्ध करना चाहते थे कि वे अपने राज्य में जो चाहें वह करने में सक्षम हैं । पंजाब में भी अंग्रेजों ने यही किया जिसका विरोध करते हुए नामधारी सिखों ने बुचड़खाने पर हमला किया ।

पंजाब में गौवध

खालसा राज के समय गौवध पर पूर्ण प्रतिबंध था । यहां तक कि 1845-46 में अंग्रेजों और सिखों के प्रथम युद्ध के बाद भी यही नीति जारी रही जिस समय पंजाब का शासन महाराजा दलीप सिंह के कार्यकाल में खालसा दरबार ही कर रहा था । फिर भी अंग्रेजों ने छेड़-छाड़ करने की अपनी आदत नहीं छोड़ी । लाहौर स्थित अंग्रेज रैजीडैंट हैनरी लॉरैंस था और लाहौर तथा अन्य कई शहरों में अंग्रेज सेना की छावनियां थीं । अमृतसर में भी ऐसी ही एक छावनी थी । खालसा दरबार की नीति के विरूद्ध अमृतसर में गौवध होने लगा और अंग्रेज जूतों सहित दरबार साहिब में प्रवेश करने लगे । पवित्र स्थान का अपमान देख कर अमृतसर के पुजारियों को बहुत कष्ट हुआ और इसकी शिकायत सरकार के पास की गई । पंजाब में अभी अंग्रेजों के

पैर पूरी तरह जमे नहीं थे इसलिए गवर्नर जनरल के आदेश पर अंग्रेज रैज़ीडैंट हैनरी लॉरैंस ने 24 मार्च, 1847 को एक ताम्र-पत्र पर आदेश लिख कर दरबार साहिब के बाहर लगा दिया जिसमें कहा गया था कि अमृतसर में गौवध नहीं किया जायेगा और जूते उतार कर दरबार साहिब के अन्दर प्रवेश किया जाये।[3]

परन्तु ये स्थिति अधिक समय तक कायम न रह सकी। दो वर्ष बीतने के बाद मार्च 1849 में अंग्रेजों ने पूरी तरह पंजाब पर अपना शासन स्थापित कर दिया। अब अंग्रेज अपनी मर्जी के मालिक थे और जो चाहते थे करने लगे, उन्हें रोकने वाला कोई नहीं था। गौहत्या पर प्रतिबंध अंग्रेजों को अखर रहा था इसलिए पंजाब को अपने साम्राज्य में शामिल कर लेने के शीघ्रोपरान्त उन्होंने गौवध के बारे में जारी किए पहले आदेश में संशोधन कर दिया जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म के अनुसार रीति-रिवाज मानने की छूट दे दी गई। आदेश में कहा गया था कि किसी व्यक्ति को अपने पड़ौसी के धार्मिक रीति-रिवाजों में हस्ताक्षेप करने की आज्ञा नहीं होगी। (No one should be allowed to interfere with the practice by his neighbour, of customs which that neighbour's religion permits). गर्वनर जनरल के उपरोक्त आदेश के बाद बोर्ड ऑफ डायरैक्टरज़ ने गौहत्या पर लगी पाबंदी हटा ली और विभिन्न स्थानों पर बुचड़खाने खोलने की आज्ञा दे दी।

गऊ हत्या के बारे में अंग्रेज नीति

जैसा कि पहले बताया गया है कि अंग्रेज गऊ मास खाते थे। भारत में हिन्दू वर्ग गौहत्या के विरूद्ध था। इसलिए अंग्रेजों ने पहले तो

बंगाल में कुछ लेखकों को पद तथा धन का लालच देकर वेदों में गऊ मांस खाने के बारे में लिखवाया ताकि वे अपनी नीति को तर्कसंगत ठहरा सकें। फिर उन्होंने जिन स्थानों पर अपना शासन स्थापित किया वहां संधि की शर्तों में गौहत्या पर प्रतिबंध लगाने की बात करने के बावजूद इसे लागू नहीं किया गया । राजपूताना की रियासतों में जब सत्ता के बारे में संधियां की गईं तो राजपूत शासकों ने गौहत्या न करने की धारा जोड़ने के लिए बल दिया परन्तु दिल्ली स्थित रैज़ीडैंट चार्लस मैटकॉफ ने ऐसी धारा शमिल करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया । परन्तु मौखिक रूप में कहा गया कि रियासती लोगों की धार्मिक भावनाओं को 'यथासम्भव' ध्यान रखा जायेगा, जो कभी नहीं रखा गया । रैज़ीडैंट मैटकॉफ ने भारत सरकार के सचिव को एक पत्र में लिखा "I take the opportunity of mentioning in this place that in the negotiations which I have yet had with the Rajpoot States, they have all sought to have an agreement included in the treaties against the slaughter of horned cattle in their territories. Though I have uniformly declared it to be impossible to admit such a stipulation into a treaty. I have assured them that all possible attention shall be paid to their religious feelings on this point."

जिस प्रकार पंजाब में अंग्रेजों का शासन पूरी तरह स्थापित होते ही गौहत्या होनी शुरू हो गई थी उसी प्रकार राजपूताना की रियासतों में भी अंग्रेजों ने गौहत्या शुरू करवा दी जिसका सभी रियासतों में भारी विरोध हुआ परन्तु अंग्रेजों ने उसकी परवाह नहीं की । रियासतों के प्रमुखों द्वारा गौहत्या के विरूद्ध शिकायतें करने पर अंग्रेजों का असली रूप नंगा हो गया था और उनकी नियत खुल कर सामने आ गई थी । अजमेर में गौहत्या करने के प्रश्न के उत्तर में गवर्नर जनरल के विचार थे "वह अपने अधिकार क्षेत्र में जो चाहें कर सकते हैं । रियासतों के

प्रमुखों को उस पर आपत्ति करने को कोई अधिकार नहीं इसलिए अजमेर में गौहत्या की आज्ञा दी जाती है। (Governor General observes that the Chiefs have no right to object to what we do within our own border, his excellency accordingly approves of your proposal to permit the slaughter of kine in agree).[6]

गौहत्या की समस्या जारी रहने पर 1864 में फिर एक बार राजपूताना के अंग्रेज एजेंट को लिखा गया कि गवर्नर जनरल इन कांउसिल किसी भी प्रकार से गौहत्या को अपराध घोषित नहीं करेंगे ।[5] (Governer General in Council can not even by implication sanction the idea that kine-killing is a crime)

गौहत्या को अंग्रेजों ने अपनी तथा सेनाओं की आवश्यकता को मुख्य रखते हुए जो नीति तैयार की थी उसे स्पष्ट करते हुए भारत सरकार के सचिव कर्नल ड्यूरैंड ने अजमेर के एजेंट को लिखा कि जो क्षेत्र सुरक्षा के लिए सेना के अधीन हैं, वहां सैनिकों की आवश्यकता के लिए जो भी जरूरी हो वह करने में सक्षम हैं ।(Where the military protection of the country, develops upon the British Govt., the Govt. must be absolutely free to adopt such measures for the subsistence of the troops as may be thought most suitable)' इसका भाव स्पष्ट था । अंग्रेजी शासन की सुरक्षा के लिए अंग्रेज सेना रखना आवश्यक होता था और इसलिए गौहत्या करना उनका अधिकार बन जाता था । पंजाब में भी मार्च 1849 के बाद ऐसी ही स्थिति बन गई थी । अंग्रेज सेना पंजाब के शहरों में बैठी थी और विभिन्न स्थानों पर बुचड़खाने खुल गए थे ।

अमृतसर में भी ऐसा ही हुआ और एक नहीं बल्कि दो बुचड़खाने खुले।

अमृतसर में गौहत्या

अमृतसर की आबादी में मुसलमानों की संख्या 50, हिन्दुओं की 40 और सिखों की 10 प्रतिशत थी। सिखों के समान हिन्दु भी गौहत्या शुरू होने पर बहुत दूखित थे। कई बार झगड़े हुए, प्रशासन के पास शिकायतें भी की गई, परन्तु कोई सुनवाई नहीं हुई। बुचड़खाने खोलते समय कसाईयों को हिदायत की जाती थी कि गऊ मास बेचने के लिए शहर नहीं लाया जायेगा। गऊ मास खरीदने वाले स्वंय बुचड़खाने से मांस खरीद कर ले जायेंगे और वह भी ढक कर ताकि दूसरों की भावनाओं को ठेस न पहुंचे। पर वास्तविक तौर पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। शहर में मुसलमानों की बहुसंख्या को देखते हुए मांस बेचने वाले खुलेआम ला कर मांस बेचने लगे। यहां तक कि मांस बेचने की दुकानें भी पवित्र दरबार साहिब के पास खोली गई।

कूका आन्दोलन का प्रभाव

पंजाब पर अंग्रेजों का शासन स्थापित होने के शीघ्र बाद ही पंजाब में एक जनान्दोलन आरम्भ हो गया जिसका उद्देश्य सिख धर्म के अन्दर आई बुराईयों को दूर करके लोगों को गुरू साहिबान के उपदेशों की ओर प्रेरित करना और फिर से खालसायी शान को स्थापित करने के लिए खालसा राज की स्थापना करना था। इस आन्दोलन के प्रवर्तक थे सतगुरू रामसिंह जो स्वंय 8 साल तक खालसा फौज में रह चुके थे और उन्होंने खालसा राज का पतन अपने सामने देखा था। वर्ष 1857 की वैसाखी (12 अप्रैल) को भैणी साहिब गांव में सतगुरू जी ने

श्वेत झंडा लहरा कर अंग्रेजों के विरूद्ध आन्दोलन का बिगुल बजाया था जिसे इतिहास में 'कूका आन्दोलन' कहा जाता है।[9] सतगुरू रामसिंह जी का व्यक्तित्व अद्वितीय तथा आकर्षक था । उनका प्रचार इतना प्रभावशाली था कि पंजाब के लोग मांस और मदिरा तथा अन्य नशे छोड़ कर नाम-स्मरण तथा गुरु-वाणी की और रूचित हो गए । प्रमुख निर्मला इतिहासकार ज्ञानी ज्ञानसिंह के अनुसार:

हुक्के छुड़वाये, रखवाये केश मोनयों के,
सुधा चक थाये, सिख भाग जिने जाग्यो,
भीम भंग पोस्त शराब मांस चोरी जारी,
ठगी तज थीये संत, सतजुग आग्यो ।

(पंथ प्रकाश)

श्री सतगुरू रामसिंह जी ने पंजाब के लोगों को अंग्रेजों की कुटिल नीति के प्रति जागृत करते हुए प्रचार किया और गर्व के साथ जीने की प्रेरणा दी । पंजाब के लोग अंग्रेज शासन से खुश नहीं थे । वे भली-भान्ति जानते थे कि अंग्रेजों ने किस प्रकार की चालें चल कर और लाहौर दरबार में फूट डाल कर पंजाब के राज पर कब्जा किया था। केवल जागीरदार, रजवाड़े तथा पुजारी वर्ग ही अपने स्वार्थ के लिए नये मालिकों को गुणगान करने तथा चापलुसी करने में लगे हुए थे। उन्हें पंजाब में तेजी से घट रही घटनाओं तथा लोगों की भावनाओं का कोई ख्याल नहीं था । इसलिए जब सतगुरू श्री रामसिंह जी ने प्रचार शुरू किया तो शीघ्र ही भारी संख्या में पंजाब के लोग संगठित होने शुरू हो गए ।

खालसा राज के समय के लोगों को कुछ ही वर्षों में विभिन्न स्थानों पर गऊ हत्या होती देख कर बड़ा कष्ट होता था और पवित्र नगरी अमृतसर में तो स्थिति और भी विकट हो रही थी। भगवती छक्का (उग्रदंती) में दशम पातशाह ने फरमाया है :

यही देह आज्ञा तुरकन गाहे खपाऊं,

गऊ घात का दोख जग स्यों मिटाऊं ।

महाराजा रणजीत सिंह के शासनकाल में तुर्कों के पंजाब में रहते हुए भी गौहत्या बन्द थी परन्तु अंग्रेजों का शासन आते ही सरकार की शह पर तुर्क भी गौहत्या करने लगे थे और उन्हें रोकने वाला कोई दिखाई नहीं पड़ रहा था । पावन नगरी अमृतसर के लोग दुखित और दुखी थे। शहर में गौ – मांस खुलेआम बिकने लगा था, चीलें और काग गौ – मांस की बोटियां ले कर उड़ते थे और कई बार ये हड्डिया पावन सरोवर या परिक्रमा में भी गिर जाती थी । यहां यह बात याद रखने वाली है कि 1845 के बाद जब अंग्रेज सेना पंजाब आई थी तो अमृतसर में गौहत्या देख कर तथा पावन दरबार साहिब में जूतों समेत अंग्रेजों के घुसने से दरबार साहिब के पुजारियों ने घोर आपत्ति की थी जिसके परिणामस्वरूप 1847 में हैनरी लॉरैंस ने तामर – पत्र लिख कर मुख्य द्वार पर लगवाया था कि अमृतसर में गौहत्या नहीं की जायेगी । उस समय पंजाब का शासन सिख परिषद कर रही थी । परन्तु बाद में पंजाब के पुजारियों का रवैया भी बदल गया । पंजाब के प्राधीन होते ही गौहत्या बढ़ गई परन्तु पुजारी वर्ग मौन रहा ।

गौहत्या के विरूद्ध शिकायतें

अमृतसर के हिन्दू भी गौमांस की खुलेआम बिक्री से दुखी थे ।उन्होंने कई बार यह मामला सरकार के समक्ष उठाया । 20 मई, 1849 को मि0 सांडरस के पास शिकायत की गई । 07 मई, 1858 को शहर में गौमांस बेचे जाने के बारे में मि0 कूपर के पास भी शिकायत की गई । इसी प्रकार मई 1863 को मेजर सर्कर के पास तथा नवम्बर 1864 में मि0 मैकनॉब के पास शहर में खुलेआम गौमांस बेचने के विरूद्ध शिकायतें की गई । परन्तु कोई परिवर्तन न हुआ[10], बल्कि कसाईयों को हौसला और बड़ गया तथा दरबार साहिब के निकट भी गौमांस की दुकानें खुल गईं।

अमृतसर शहर में सिखों की संख्या आटे में नमक के समान थी। दरबार साहिब की पवित्रता बनाये रखने के बारे में पुजारियों को न तो चिन्ता थी और न ही ध्यान । अप्रैल 1871 में देवा सिंह नामक सिंख ने, जो बाबा बीर सिंह नौरंगाबादी का शिष्य था, परिक्रमा में पड़ी हड्डी उठा कर पुजारियों का ध्यान इस ओर दिलाया तो कोई उपाय करने की बजाए श्री दरबार साहिब के सरबराह मंगल सिंह रामगढ़िया ने देवा सिंह को पकड़ कर पुलिस के हवाले कर दिया । देवा सिंह को तीन साल कैद की सजा दी गई ।[11] इस प्रकार अमृतसर में गौहत्या का मामला गर्म हो गया । जब सरकार का ध्यान बार – बार इस ओर दिलाने के बावजूद इस समस्या का कोई समाधान निकलता दिखाई न पड़ा तो लोग एकजुट होना शुरू हो गए । इससे पहले 03 अप्रैल, 1871 को भी नगर के हिन्दुओं तथा मुसलमानों में तनाव पैदा हुआ था, देवा सिंह की

गिरफ्तारी से लोगों का रोष और बढ़ गया। अभी स्थिति तनावपूर्ण ही थी कि 08 मई, 1871 को हिन्दुओं और मुसलमानों में फिर गरमा – गरमी हो गई । डिप्टी कमीश्नर ने स्वंय शहर में जाकर स्थिति का जायजा लिया और सद्भावना स्थापित करने की कोशिश की । हिन्दुओं तथा सिखों की मांग थी कि शहर में गऊ मांस बेचने पर प्रतिबंध लगाया जाये परन्तु सरकार मुसलमानों को नाराज नहीं करना चाहती थी इसलिए यह मांग स्वीकार करने की बजाए टालमटोल किया गया । पहले दिन 22 हिन्दुओं को गिरफ्तार भी किया गया । बुचड़खाने पर कोई अप्रिय घटना न हो इस बात को ध्यान में रख कर सुरक्षा के लिए पुलिए टुकड़ी वहां बैठा दी गई जो 31 मई तक वहां रही ।[12]

शहर के 22 हिन्दुओं की गिरफ्तारी के कारण नगर में तनाव बढ़ गया और लोग एकजुट होने शुरू हो गए । 20 मई को अमृतसर के कार्यकारी आयुक्त ने लोगों को संयम बरतने के लिए कहा तथा नगर परिषद की बैठक बुलाई । हिन्दुओं तथा सिखों की मांग के बावजूद बुचड़खाना जारी रखने का फैसला किया गया । इंग्लैंड में कच्चे चमड़े की मांग पूरी करने के लिए मुसलमान कसाई भारी संख्या में गौ वध करने लगे । लोगों का रोष और बढ़ गया । यह तनाव उस समय और भी ज्यादा हो गया जब रोष प्रकट करने के लिए हिन्दुओं ने निर्णय किया कि वे एकादशी के अवसर पर (30 मई, 1871) मुसमान कुम्हारों से मिट्टी के घड़े तथा बर्तन नहीं खरीदेंगे । मुसलमान कुम्हारों ने हर वर्ष की तरह इस अवसर के लिए भारी मात्रा में घड़े तथा अन्य बर्तन बनाए थे जो बिक न पाये । इसके साथ ही हिन्दू बर्तन व्यापारियों ने दूसरे वर्ग

के लोगों से पीतल के पुराने बर्तन खरीदने भी बंद कर दिए। शहर में आपसी सद्भाव खत्म हो रहा था तथा हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दूरी बढ़ रही थी । ऐसा होते हुए भी सरकार ने शहर में गौमांस की बिक्री रोकने के लिए कोई गम्भीर प्रयत्न न किया बल्कि अमृतसर के आयुक्त ने 03 जून को शहर के प्रमुख व्यक्तियों, भाई प्रदुय्मण सिंह, हरचरण दास तथा खान मोहम्मद शाह तथा अन्द नागरिकों की बैठक बुला कर सोहारद बनाए रखने के लिए लम्बा - चौड़ा भाषण दिया परन्तु गौहत्या रोकने के लिए कुछ न किया। स्थिति ज्यों की त्यों ही रही ।[13]

बुचड़खाने के विरूद्ध कार्यवाही

अमृतसर शहर में सिखों की संख्या केवल 10 प्रतिशत थी और इनमें नामधारी सिख और भी कम थे । ये कोई 15 - 20 परिवार ही थे । सतगुरू श्री रामसिंह जी ने कई बार इस क्षेत्र में प्रचार यात्रायें कीं और सामान्य सिखों में उनका बहुत प्रभाव था । श्री सतगुरू जी के प्रचार के परिणामस्वरूप नामधारी सिखों में काफी चेतना पैदा हो चुकी थी और वे अंग्रेजों तथा सरकार से घृणा करते थे । नामधारी सिख पंजाब में हो रही गौहत्या के प्रति पूर्णतया जागरूक थे । अमृतसर शहर के प्रमुख नामधारी सिखों ने मिलकर कोई ठोस कार्यवाही करने का निर्णय किया । उन दिनों अमृतसर में दो बुचड़खानें खुले हुए थे - एक छावनी क्षेत्र में और दूसरा लाहौरी गेट से थोड़ा बाहर नागरिक क्षेत्र में । उन्होंने फैसला किया कि गौहत्या की सरकारी नीति का विरोध करने के लिए बुचड़खाने पर आक्रमण किया जाये । यह विचार करने वालों में लाहौर का राजा सिंह त्रांची, लहना सिंह मिस्त्री, लछमन सिंह, लाल सिंह

सिपाही, भगवान सिंह महराणा, झण्डा सिंह ठट्टे, गुलाब सिंह चुहड़काना, लहना सिंह जट्ट और हाकम सिंह पटवारी आदि शामिल थे ।

14 जून, 1871 की आधी रात को नामधारी सिखों का जत्था अंग्रेजों की गौहत्या की नीति के विरोध में गऊ वध करने वालों के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए एकत्र होकर लाहौरी गेट के बाहर वाले बुचड़खाने की ओर बढ़े । इस जत्थे में शूरवीर बाबा लहना सिंह सुपुत्र सरदार बुलाका सिंह, फतह सिंह भाटड़ा, हाकम सिंह पटवारी, बीहला सिंह नारली, लहना सिंह जट्ट सुपुत्र सरदार मुसदा सिंह, सिपाही लाल सिंह, लछमन सिंह, भगवान सिंह महराना, गुलाब सिंह चुहड़काना, झण्डा सिंह ठट्टा तथा मेहर सिंह शामिल थे । कार्यवाही की रूपरेखा तैयार करने में और भी नामधारी सिख शामिल थे परन्तु कसाईयों के विरूद्ध कार्यवाई करने के लिए उपरोक्त नामधारी सिखों ने ही 14 जून आधी रात को बुचड़खाने पर आक्रमण करके वहां बांधी हुई गऊओं के रस्से काट दिए और कसाईयों पर तलवारों तथा गंडासों से हमला करके रात के अंधेरे में विलुप्त हो गए । हमले में चार बुचड़ मारे गए और तीन बुरी तरह घायल हो गए ।

15 जून प्रातः ही हर तरफ शोर मच गया । वरिष्ठ पुलिस अधिकारी घटना स्थल पर पहुंचे पर उन्हें कोई ठोस सुराग न मिला । घटना के बारे में ठोस सुराग देने वाले को बड़ा ईनाम देने का लालच दिया गया । संदेह के आधार पर शहर के निहंगों तथा बदनाम लोगों को पकड़ कर पूछताछ की गई । फिर भी जब कोई ठोस सुराग न मिला

तो तो तत्कालीन श्रेष्ठ जासूस तथा पुलिस अधिकारी मिस्टर क्रिस्टी को बुलााया गया । संदेह के आधार पर बदनाम व्यक्तियों - हीरा और अहिया को पकड़ कर ऐसी यातनायें दी गई कि उन्होंने न किया गया अपराध भी स्वीकार कर लिया और शहर के कई व्यक्तियों के नाम लिखवा दिए जिनमें सेठ जयराम भी थे । अपराध का पता लगाने में असफलता पर पुलिस की बदनामी हो रही थी इसलिए मिस्टर क्रिस्टी ने 12 व्यक्तियों को पकड़ कर इतनी सख्ती की कि उन्होंने बेकसूर होते हुए भी यह अपराध किया जाना मान लिया । ये व्यक्ति थे - संतराम, रामकिशन, मन्ना सिंह निहंग, ज्वाला सिंह, पन्ना जी, पूला, निहाल सिंह, मैया खत्री, सुंदर सिंह, भूप सिंह, टेका और शोभा । जिस अपराध का दण्ड मृत्यु हो इस स्थिति में यह बात समझी जा सकती है कि निरापराध पुलिस ने कितना अत्याचार किया होगा जिसके डर के मारे उन्होंने फांसी पर चढ़ना ही बेहतर समझा होगा । मुकदमे को पक्का करने के लिए हीरा, अहिया और जयराम को वादा मुआफ गवाह बनाया गया और 21 जुलाई को अमृतसर के मैजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया । शपथ दिला कर साक्षी दिलाई गई और 26 जुलाई 1871 को यह मुकदमा सेशन के पेश कर दिया गया ।[14]

अमृतसर की इस घटना के बारे में नामधारी सिखों पर किसी को संदेह नहीं हुआ । इसी बीच 15 जुलाई को रायकोट में बुचड़ों पर हमला हुआ । उस घटना में अमृतसर की घटना में शामिल 3 नामधारी सिख - गुलाब सिंह, लछमन सिंह और भगवान सिंह भी शामिल थे । संक्रांति के बाद अमृतसर घटना से सम्बद्ध रखने वाले कुछ सिखों ने श्री

भैणी साहिब पहुंच कर श्री सतगुरू रामसिंह जी को सारी बात बताई और कहा कि उन पर पुलिस को कोई संदेह नहीं हुआ परन्तु 12 अन्य व्यक्ति पकड़े गए हैं और उन्हें दण्ड दिया जा रहा है । यह सुन कर सतगुरू जी ने आदेश दिया कि यह कार्य आपने किया है इसका फल भी आप ही लो, निर्दोषों को छुड़वाओ और अपना अपराध स्वीकार करो, अपितु इसका श्रेय दूसरे लोगों को मिलेगा । बीहला सिंह, लहना सिंह और उनके साथियों ने सतगुरू जी के आदेश को स्वीकार किया अमृतसर पहुंच कर अपने सहयोगियों को सारी बात बताई । कुछ व्यक्ति तो उस समय गुप्तवास में चले गए थे और जो मौजूद थे उन्होंने अपने सतगुरू के आदेश को मानते हुए कचहरी में जाकर अपना दोष स्वीकार कर लिया और पकड़े गए 12 निर्दोषों को रिहा करने के लिए कहा ।[15] अदालत में हाजिर होने वाले नामधारी सिख थे - बीहला सिंह नारली, गुलाब सिंह चुहड़काना, लहना सिंह लोपोके, फतह सिंह भाटड़ा, हाकम सिंह पटवारी, लहना सिंह पन्नु, लाल सिंह सिपाही और लहना सिंह जट्ट ।

अनोखा मुकदमा

बुचड़ हत्या काण्ड की जांच हो चुकी थी और शहर के 12 व्यक्तियों को दोषी घोषित करके मुकदमा शुरू हो चुका था । वादा मुआफ गवाह भी मौजूद थे । इसलिए पहले तो इन नामधारी सिखों की बात पर किसी ने विश्वास न किया और न ही ध्यान दिया । परन्तु जब इन नामधारी सिखों ने घटनाओं का ब्यौरा तथा प्रयोग किए गए शस्त्रों के प्रमाण भी पुलिस को बताने की बात की तो पुलिस गतिशील हुई ।

इस बीच 12 व्यक्तियों पर मुकदमा जारी रहा और 25 जुलाई, 1871 को उनकी सजा की पुष्टी के लिए यह मुकदमा सेशन को सौंपा गया। हैरानी की बात तो यह है कि पुलिस निर्दोषों को दण्ड दिलानें पर जोर दे रही थी और दोषी सिखों की बात पर विश्वास नहीं कर रही थी। एक बात और पुलिस को मामले में अपनी असफलता और बदनामी का डर भी मार रहा था। क्रिस्टी जैसे महान विख्यात जासूस से ऐसी गलती होने को सरकार मानने को तैयार नहीं थी। परन्तु जब नामधारी सिखों ने विभिन्न स्थानों पर जाकर बुचड़खाने पर किए गए हमले में प्रयोग किए गए शस्त्र बरामद करवाये तो पुलिस का माथा ठनका। नामधारी सिख पुलिस हिरासत में तो थे परन्तु उसके लिए मुश्किल था कि अदालत में यह बात कैसे स्वीकार करे के असल दोषी पहले वाले 12 व्यक्ति नहीं थे, बल्कि अब स्वंय कचहरी में पेश हुए व्यक्ति थे। अपनी बदनामी के डर से अमृतसर पुलिस ने पहले पकड़े गए 12 व्यक्तियों के विरूद्ध मुकदमा जारी रखा, जो 25 जुलाई को सेशन अदालत में जा चुका था और इसके साथ ही उन्होंने गुप्त रूप से नामधारी सिखों के बयानों की पड़ताल जारी रखी जो सारी सही निकली।

इस बीच रायकोट बुचड़ हत्या केस में जो नामधारी सिख पकड़े गए थे उनमें से चार नामधारी सिखों- गुरमुख सिंह, मंगल सिंह, मस्तान सिंह और गुलाब सिंह को मृत्यु दण्ड दिए जाने की पुष्टि पहली अगस्त 1871 को जज द्वारा कर दी गई। दोनों केसों को देखते हुए अमृतसर केस की पड़ताल करने वाले अधिकारी क्रिस्टी ने गुलाब सिंह को मृत्यु दण्ड देने की घोषणा करने के बाद उससे सम्पर्क किया और

उसे जीवन-दान देने का लालच देकर अमृतसर घटना के लिए वादा मुआफ गवाह बना लिया और 02 अगस्त को अमृतसर लाकर पुलिस की कार्यवाही इस ढंग से पूरी करके दिखाई जिससे ऐसा प्रतीत हो कि नामधारी सिख स्वंय अदालत में हाजिर नहीं हुए बल्कि पुलिस ने उद्यम करके पकड़े थे। 12 निर्दोष व्यक्तियों को छोड़ दिया गया। शहर में नामधारी सिखों की जय-जयकार होने लगी और पुलिस अपने मुंह मिया मिट्ठु बनती रही और सारी कार्यवाही पूरी करके 07 अगस्त तक मुकदमा मैजिस्ट्रेट के पेश कर दिया गया। बीहला सिंह, फतह सिंह, लहना सिंह सुपुत्र मुसदा सिंह, लहना सिंह जट्ट, स० दल सिंह (वादामुआफ गवाह बनाया गया) और भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 और सिपाही लाल सिंह और लहना सिंह सुपुत्र बुलाका सिंह पर धारा 107 के अधीन केस चलाया। मेहर सिंह लोपोके, झण्डा सिंह ठट्टा और लछमन सिंह को भगौड़े घोषित किया गया। 31 अगस्त, 1871 को सेशन जज ने लहना सिंह सुपुत्र मुसदा सिंह, फतह सिंह भाटड़ा, बीहला सिंह नारली और हाकम सिंह पटवारी को फांसी की सजा और सिपाही लाल सिंह और लहना सिंह सुपुत्र बुलाका सिंह को काले पानी की सजा सुनाई। 11 सितम्बर को इन सजाओं की पुष्टी कर दी गई।[16]

नामधारी सिखों को फांसी

दण्ड की घोषणा सुन कर नामधारी सिख भयभीत नहीं हुए। धर्म के अनुसार किए गए अपने कार्य के लिए फल भोगने के लिए वे स्वंय कचहरी में उपस्थित हुए थे। अपने सतगुरू के आदेशानुसार धर्म

के हित में आत्मबलिदान उनके लिए गर्व की बात थी । 15 सितम्बर, 1871 फांसी का दिन निश्चित किया गया । शहर के लोग इस घटना को सुनकर हैरान थे । गऊ रक्षा के लिए नामधारी सिख फांसी चढ़ने लगे थे। फांसी वाले दिन 15 सितम्बर, 1871 को नामधारी सिखों ने दरबार साहिब के सरोवर में स्नान करने की इच्छा व्यक्त की और साथ ही यह भी कहा कि गऊ के चमड़े से बचे रस्से को वे अपने शरीर को नहीं लगने देंगे, जल्लाद उन्हें हाथ न लगाए, फांसी के फंदे को वे स्वंय अपनी बारी पर अपने गले में डालेंगे ।

अधिकारियों ने नामधारी सिखों के ये अनुरोध स्वीकार कर लिए और उनकी फांसी के लिए विशेष रूप से रेशमी फंदे बनवाये गए । 15 सितम्बर को प्रात: उन्होंने पवित्र सरोवर में स्नान किया और शब्दोच्चारण करते हुए रामबाग आये, जहां उन्हें फांसी दी जानी थी । उनको फांसी देने के लिए एक बड़े वट वृक्ष पर रेशम के फंदे लटकाये गए । श्वेत वस्त्र पहने नामधारी सिखों के चेहरों पर लालिमा दौड़ रही थी।[17] शहर के लोगों की भारी संख्या इस दृश्य को देखने के लिए रामबाग में एकत्र थी । सिंह यह शब्द उच्चारण करते हुए फांसी स्थल पर पहुंचे:

"तेरी शरण मेरे दीन-दयाला, सुख सागर मेरे गुरू गोपाला,

कर कृपा नानक गुण गावै, राखो शरण असाडी जीओ"

वट वृक्ष के साथ सरेआम फांसी दी जानी थी । गऊ वध करवाने वाले फिरंगियों का नाश हो, धर्म की जय हो- यह कहते हुए इन सिखों ने बारी-बारी फांसी के फंदे अपने गले में डाले नीचे से तख्ता

खींचे जाने पर वे हंसते हुए गुरपुरी सिधार गए । शहर के लोग हैरान होकर गौहत्या के विरूद्ध आत्मबलिदान करने वाले नामधारी सिखों की जयजयकार कर रहे थे और अंग्रेजों को बुरा-भला कह रहे थे, जिनकी कुरितियों के कारण पंजाब में गौहत्या बढ़ी थी ।

शहीद होने वाले इन नामधारी सिखों में से एक हाकम सिंह अपनी माता का इकलौता बेटा था । वह बड़े साहस के साथ फांसी स्थल पर आई । उसने अपने पुत्र और तीन अन्य सिखों के पार्थिव देहों स्नान कराया तथा उनका अन्तिम संस्कार किया । झण्डा सिंह ठट्टा को, जिसे मुकदमे के दौरान भगौड़ा करार दिया गया था, अगले वर्ष काबुल से लौटने पर गिरफ्तार करके अगस्त 1873 में फांसी दे दी गई ।[18] बुचड़ हत्या काण्ड की योजना बनाने और तलवारें उपलब्ध करवाने वाला सिपाही लाल सिंह, भगौड़ा करार दिया गया लछमन सिंह और जवाहर सिंह तीनों भाई थे। लाल सिंह और लहना सिंह सुपुत्र बुलाका सिंह को काले पानी भेज दिया गया, जहां से वे नहीं लौटै और वहीं शहीद हो गए।

घटना का प्रभाव

नामधारी सिखों द्वारा गऊ हत्यारों के विरूद्ध की गई कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप यह बात स्पष्ट हो गई कि पंजाब का गौरव अभी जिन्दा है, मरा नहीं और वह अंग्रेजों के गौहत्या के आदेशों के विरूद्ध अपना विरोध जारी रखेंगे । पुलिस विभाग दिखावे के तौर पर अपनी बड़ाई करता रहा परन्तु आंतरिक स्तर पर उसकी असफलता के बारे में दफ्तरी कार्यवाही 1874 तक चलती रही । स्वंय लै० गवर्नर ने

पुलिस अधिकारी क्रिस्टी की कार्यशैली पर प्रश्नचिन्ह लगाया था ।

नामधारी सिखों ने 15 सितम्बर, 1871 को किसी स्वार्थ के लिए आत्मबलिदान किया था, न ही नामधारी पंथ के लिए, बल्कि उन्होंने यह बलिदान अमृतसर शहर तथा श्री दरबार साहिब की पवित्रता बनाये रखने के लिए किया था । एक सिख देवा सिंह ने श्री दरबार साहिब की पवित्रता भंग होने की ओर पुजारियों का ध्यान आकर्षित किया था तो मंगल सिंह रामगढ़िया ने उसे पकड़वा कर तीन वर्ष की कैद की सजा दिलवाई थी । ऐसी स्थिती में जब कोई चारा नहीं था नामधारी सिखों ने श्री दरबार साहिब की पवित्रता के लिए बलिदान दिया । इन तथ्यों की पुष्टिी तत्कालीन सरकारी दस्तावेज़ तथा समाचारपत्र भी करते हैं । इस प्रकार 15 सितम्बर 1871 को फांसी के फंदे पर झूल जाने वाले चारो नामधारी सिख और झण्डा सिंह अमृतसर शहर के शहीद बनते हैं, अमृतसर शहर के लिए यह गर्व की बात है । इन शहीदों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि 15 सितम्बर को शहीदी दिवस केवल नामधारी पंत ही न मनाये, बल्कि शिरोमणी गुरूद्वारा प्रबंधक कमेटी और दरबार साहिब की ओर से भी मनाया जाये । यह शहीदी दिवस बड़े पैमाने पर हर वर्ष मनाया जाना चाहिए और शहीदों के चित्र सिख संग्रहालय में लगाये जाने चाहियें ।

शहीदी स्मारक

काफी समय से नामधारी सिखों को फांसी देने के स्थल रामबाग के वट वृक्ष की ओर ध्यान नहीं दिया गया । शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने और स्मारक बनाने के पवित्र कार्य को सरदार

प्रकाश सिंह बादल ने शुरू किया और अमृतसर में इस शहीदी स्थान को स्मारक का दर्जा दिया ।

15 सितम्बर को शहीदी दिवस के अवसर पर अमृतसर में इन चारों शहीदों- लहना सिंह, हाकम सिंह, फतह सिंह और बीहला सिंह के प्रति हम नमन करते हैं । कभी चन्दा सिंह की ये पंक्तियां याद आती हैं:

एह मलेछ नन्दनों आए, एह बुचड़खाने लाए,

सानु दुख गऊआं दा खाये, सिंह शीश देन नु आये,

नांए करतार दे ।

-जसविंद्र सिंह

मोबाईल - 09810217696

सन्दर्भ तथा टिप्पणियां

1. पंजाब मोडी स्वतंत्रता संग्रामिये - पृष्ठ 188
   एम.एल. आहलुवालिया और डॉ0 कृपाल सिंह
2. सरकारी तौर पर महाराजा रणजीत सिंह के शासन को सरकार खालसा कहा जाता था
3. " Kine are not to be killed at Amritsar, nor are the sikhs to be molerted nor in any way to be interfered

with. Shoes are to be taken off at the Bunga at the corner of the tank and no person is to walk round the tank with his shoes on." H.M. Lawrence, Resident. 24 March, 1847

होम जूडिशियल, 01 जुलाई 1871 नं0 45 – 61

4. वही

5. प्रोसीडिंग नं0 13, फारिन डिपार्टमैंट पोलिटिकल, 01 दिसम्बर 1864

6. राजपुताना के एजैंट को भारत सरकार के सचिव का पत्र नं0 2056, दिनांक 09 जुलाई 1858

7. भारत सरकार के सचिव का राजपूताना के एजेंट को पत्र नं0 426, दिनांक 29 अगस्त, 1864

8. फोर्ट विलियम, पत्र नं0 582, दिनांक 25 नवम्बर, 1864

9. जुग पलटाऊ सतगुरू – पृष्ठ 31 – निधान सिंह आलम

10. होम जूडिशियल नं0 1, 29 जुलाई 1871 – पृष्ठ 45 – 61

11. वही

12. वही

13. होम डिपार्टमैंट जूडिशियल प्रोसीडिंग, अगस्त 1874 – पृष्ठ 101 – 112

14. नामधारी इतिहास (हिन्दी) – सरदार नाहर सिंह – पृष्ठ 127

15. सतगुरू बिलास - भाग 1 - संत संतोख सिंह - पृष्ठ 428

16. होम डिपार्टमैंट जूडिशियल प्रोसीडिंग, नं0 67-68, दिनांक 4 नवंबर 1871

17. सतगुरू बिलास - भाग 1 - संत संतोख सिंह - पृष्ठ 430

18. होम डिपार्टमैंट जूडिशियल प्रोसीडिंग - पृष्ठ 101-102, अगस्त 1874

देश की स्वाधीनता के लिए नामधारी सिख जेलों में

नामधारी सिखों ने देश की स्वाधीनता के लिए अद्वितिय बलिदान दिए हैं। जनवरी 1972 में सभी नामधारी सूबों (प्रचारकों) को अंग्रेज शासकों ने देश-विदेश की जेलों में बंद कर दिया था। ये जेलें अदन, असीरगढ़ अलाहाबाद, हज़ारीबाग, मोलमीन (बरमा-मयांमार) आदि स्थानों पर थीं। नामधारी सिखों को काले पानी (अंडेमान-निकोबार) में आजीवन कारावास की सजा दी गई। उनका अपराध यही था कि उन्होंने बरतानवी शासन को समाप्त करके देश में स्वराज की स्थापना के लिए स्वाधीनता संग्राम छेड़ा था । सैंकड़ों नामधारी सिख अंग्रेज सरकार की जेलों में असहनीय तथा अवर्णनीय कष्ट झेलते हुए शहीद हो गए।

नामधारी सिखों पर अत्याचारों का दौर

नामधारी सिखों ने देश की स्वाधीनता के लिए असहनीय कष्ट बर्दास्त किए। अंग्रेजों ने सैंकड़ों नामधारी सिखों को पत्थरों से बांध कर सागर में डुबा कर मार दिया। परन्तु किसी भी नामधारी सिख ने बरतानवी शासन की अधीनता स्वीकार न की। वे निरंतर 90 वर्ष (1857-1947) संघर्षरत रहे और बलिदान देते रहे। विश्व इतिहास में बलिदानों का ऐसा और उदाहरण नहीं है।

देश की स्वाधीनता का पहला संग्राम "कूका आन्दोलन" 12 अप्रैल, 1857

असहयोग तथा स्वदेशी लहर के प्रवर्तक

श्री सतगुरू राम सिंह जी

अंग्रेजी अदालतों का बहिष्कार
पंचायतों की स्थापना

विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार
स्वदेशी का प्रचार

अंग्रेजी डाक-तार का बहिष्कार
अपनी डाक व्यवस्था

अंग्रेजी स्कूलों का बहिष्कार
धर्मशालाओं में बच्चों की शिक्षा

अंग्रेजी रेलों का बहिष्कार
यातायात के अपने साधन